विष्णु की शास्त्रीय-मूर्ति का स्वरूप

वर-कन्हरा एवं खजुरी की विष्णु-प्रतिमाएँ

डॉ. जितेन्द्रकुमार सिंह 'संजय'

"वस्तुतः नारायण ही विष्णु का प्राचीन स्वरूप है। आगे चलकर वासुदेव कृष्ण भी विष्णु से अभिन्न हो गये। ईसा पूर्व सात्वत पाञ्चरात्र और भागवत के नाम से वैष्णव मत के प्रचार-प्रसार के पुष्कल प्रमाण प्राप्त होते हैं। ईसा पूर्व द्वितीय शताब्दी से वैष्णव देवताओं की मूर्तियाँ उपलब्ध होने लगती हैं। 'देवतामूर्तिप्रकरणम्' में विष्णु के चौबीस स्वरूपों की प्रतिमाएँ बतायी गयी हैं। विष्णु के चौबीस अवतार माने गये हैं और चौबीस ही विष्णु की प्रतिमाएँ कही गयी हैं।"

सचिव, प्रभाश्री ग्रामोदय सेवा आश्रम, देवगढ़, शिवद्वार – 231210, सोनभद्र (उ. प्र.), मो. नं. : 06306770753, 09473614545
ईमेल : drjkssanjay@gmail.com, drjkssanjay@yahoo.in

सोनभद्र की घोरावल तहसील का दक्षिणी भूभाग प्राचीनकाल में सघन विन्ध्याटवी से परिवेष्टित था। विन्ध्य की कैमूर पर्वत श्रृंखला के दोनों किनारे शाल, बाँस, मधूक, अश्वत्थ, वट, उदुम्बर, मौलिश्री एवं आम्र वृक्षों की हरिताभा से सुसज्जित थे। इसी विन्ध्याटवी में शैवतीर्थ शिवद्वार के समीप नैऋत्य कोण पर वर-कन्हरा एवं आग्नेय कोण पर खजुरी नामक गाँव अवस्थित हैं। दोनों गाँव भगवान् विष्णु की मनोहारी मूर्ति के लिए प्रसिद्ध हैं। ऋग्वेद में विष्णु का अनेक बार उल्लेख हुआ है। विष्णु से सम्बन्धित पाँच सम्पूर्ण सूक्त और कतिपय सूक्तांश ऋग्वेद में हैं। जहाँ भी विष्णु का वर्णन है, वहाँ उन्हें दिव्य, महान् और व्यापक शक्तिसम्पन्न कहा गया है। उन्हें बृहच्छरीर एवं युवा-कुमार आदि विशेषणों से युक्त प्रस्तुत किया गया है।[1] वे इन्द्र के सहयोगी के रूप में भी चित्रित किये गये हैं।[2] वे सुकृत्तर हैं, वे हत्यारे नहीं हैं। वरिष्ठदाता हैं, उदार हैं, साक्षक हैं, वदान्य हैं, आवृक और उदार दानी हैं। केवल वे ही पृथ्वी, ध्रुवलोक एवं अशेष भुवनों को धारण किये हैं। विष्णु के तीन पद का उल्लेख करते हुए ऋग्वेद में कहा गया है कि अपने तीन पदों द्वारा विष्णु पार्थिव लोकों की परिक्रमा करते हैं। इनमें से दो पद तो मनुष्यों को दृग्गत होते हैं, तृतीय या सर्वोच्च पद पक्षियों की उड़ान और मर्त्य-चक्षु के उस पार है।[3] सम्भवतः भगवान् विष्णु के इसी रूप को लेकर आगे त्रिविक्रम की कल्पना की गयी होगी।

वैदिकोत्तर वाङ्मय में विष्णु विशेष महत्त्वपूर्ण देवता के रूप में प्रतिपादित हैं। शतपथब्राह्मण में उन्हें समस्त देवताओं की अपेक्षा श्रेष्ठ बताया गया है।[4] ऐसा प्रतीत होता है कि यज्ञों में उनका स्थान उच्च पदाभिषिक्त हो गया था। एक स्थान पर तो देवों द्वारा आयोजित यज्ञ में उनका स्थान सर्वप्रथम निर्धारित किया गया है। विभिन्न पुराणों में मुख्यतया 'विष्णुपुराण' एवं 'वायुपुराण' में विष्णु का महत्त्व प्रतिपादित किया गया है। इसके अनुसार अखिल विश्व में विष्णु की शक्ति व्याप्त है। 'वायुपुराण' में विष्णु को

1. बृहच्छरीरो विमिमान ऋक्वभिर्युवाकुमारः प्रत्येत्याहवम्। - **ऋग्वेद** 1/155/2
2. (क) A. A. Macdonell : **VEDIC MYTHOLOGY : STRASBURG VON KARL J. TRÜBNER**, 1897, Page 39 (ख) डॉ. सूर्यकान्त (अनुवादक) : **वैदिक देवशास्त्र** : श्रीभारत भारती (प्राइवेट) लिमिटेड, 1 अंसारी रोड, नया दरियागंज, दिल्ली-6, संस्करण 1961, पृ. 88
3. द्वे इदस्य क्रमणे स्वर्दृशोऽभिख्याय मर्त्यो भुरण्यति। तृतीयमस्य नकिरा दधर्षति वयश्चन पतयन्तः पतत्रिणः।। - **ऋग्वेद** 1/155/5
4. देवानां श्रेष्ठ इति। - **शतपथब्राह्मण** 14/1/1/5

नारायण कहा गया है, जो एकमात्र साधनीय हैं।[5] विष्णुपुराण में भी विष्णु के लिए नारायणन सम्बोधन दिया गया है।[6] मत्स्यपुराण के अनुसार शुक्र, बृहस्पति आदि समस्त देव विष्णु को नारायण रूप में स्मरण करते हैं।[7] नारायण विषयक आदिभाव ऋग्वेद में भी मिलता है। वहाँ उस प्रथम जल की चर्चा की गयी है, जिसमें स्वयंभू वर्तमान थे और जिन्होंने समस्त जीवों को धारण किया था।[8] नारायण में ही सभी लोक, देव, वेद तथा प्राण की प्रतिष्ठा है। 'शतपथब्राह्मण' में ऐसा उल्लेख हुआ है।[9] जल ही विष्णु का प्रथम निवास था। 'नार' (नर + अण्) का अर्थ जल और 'अयनम्' (अय् + ल्युट्) का अर्थ घर होता है। जल में घर होने के कारण ही विष्णु को नारायण कहा गया है। ऐसी ही व्याख्या 'मनुस्मृति' में भी है-

आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः।
ता यदस्यायनं पूर्व तेन नारायणः स्मृतः।।[10]

वस्तुतः नारायण ही विष्णु का प्राचीन स्वरूप है। आगे चलकर वासुदेव कृष्ण भी विष्णु से अभिन्न हो गये। ईसा पूर्व सात्वत पाञ्चरात्र और भागवत के नाम से वैष्णव मत के प्रचार-प्रसार के पुष्कल प्रमाण प्राप्त होते हैं। ईसा पूर्व द्वितीय शताब्दी से वैष्णव देवताओं की मूर्तियाँ उपलब्ध होने लगती हैं। 'देवतामूर्तिप्रकरणम्' में विष्णु के चौबीस स्वरूपों की प्रतिमाएँ बतायी गयी हैं। विष्णु के चौबीस अवतार माने गये हैं और चौबीस ही विष्णु की प्रतिमाएँ कही गयी हैं। पद्मपुराण, अग्निपुराण, चतुर्वर्ग्गचिन्तामणि एवं मानसोल्लास में इन प्रतिमाओं का वर्णन प्राप्त होता है।[11] श्री कृष्णनारायणप्रसाद 'मागध' ने विष्णु की चौबीस प्रतिमाओं के विषय में लिखा है- 'अग्निपुराण (48/1-12) में चौबीस विष्णुमूर्तियों के नाम इस प्रकार हैं-

1. केशव,	2. नारायण,	3. माधव,
4. गोविन्द,	5. विष्णु,	6. मधुसूदन,
7. त्रिविक्रम,	8. वामन,	9. श्रीधर,
10. हृषीकेश,	11. पद्मनाभ,	12. दामोदर,
13. वासुदेव,	14. संकर्षण,	15. प्रद्युम्न,
16. अनिरुद्ध,	17. पुरुषोत्तम,	18. अधोक्षज,
19. नृसिंह,	20. अच्युत,	21. उपेन्द्र,
22. जनार्दन,	23. हरि और	24. कृष्ण।

गरुडपुराण (1/45/2-3) में भी ये नाम अग्निपुराण-क्रम में ही मिलते हैं, केवल दो नामों उपेन्द्र और जनार्दन (21, 22) का क्रम उलट (22, 21) गया है। देवीभागवत (11/16/18-21) में भी ये नाम ही उल्लिखित हैं, पर उसमें दो स्थलों पर अग्निपुराण-क्रम (13, 14 एवं 21, 22) उलट गया (14, 13 एवं 22, 21) है। पद्मपुराण की मूर्ति-सूची अधूरी है। उसमें तीन

5.साध्यो नारायणश्चैव विष्णुस्त्रिभुवनेश्वरः। भविष्यतीह नाम्ना तु वाराहो नाम विश्रुतः।। - वायुपुराण 23/95

6. आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः। अयनं तस्य ताः पूर्वं तेन नारायणः स्मृतः।। - विष्णुपुराण 1/4/4/6

7. एष नारायणो भूत्वा हरिरासीत् सनातनः। ब्रह्मा वायुश्च सोमश्च धर्म्मः शक्रो बृहस्पतिः।।- मत्स्यपुराण 172/4

8. परा दिवा पर एना पृथिव्या परो देवेभिरसुरैर्यदस्ति। कं स्विद्गर्भं प्रथमं दध्र आपो यत्र देवाः समपश्यन्त विश्वे।। तमिद्गर्भं प्रथमं दध्र आपो यत्र देवाः समगच्छन्त विश्वे। अजस्य नाभावध्येकमर्पितं यस्मिन्विश्वानि भुवनानि तस्थः।। - ऋग्वेद 10/82/5-6

9. शतपथब्राह्मण 13/4/11

10. मनुस्मृति 1/10

11. पद्मपुराण, पातालखण्ड, अध्याय 78, अग्निपुराण, अध्याय 48, चतुर्वर्ग्गचिन्तामणि : व्रतखण्ड, अध्याय 1, पृ. 114-115, मानसोल्लास, तृतीय विंशति, 688-694

नाम उपेन्द्र, जनार्दन और हरि नहीं हैं, केवल इक्कीस नामों का ही उल्लेख हुआ है। रूपमण्डन में भी मूर्ति-नाम ये ही हैं, पर क्रम अग्निपुराण से पूर्णतः भिन्न है।'[12] सूत्रधारमण्डन (1400-1470 ई.) ने विष्णु की चौबीस एकल प्रतिमाओं का लक्षण वर्णित किया है, जिनमें केवल स्थानक विष्णु के आयुध का क्रम परिवर्तित होता है। यहाँ प = पद्म, च= चक्र, शं= शंख, च= चक्र, ग= गदा इस प्रकार संक्षेपाक्षरों का प्रयोग किया गया है।

केशवः प-च-शं-गश्च मधुसूदनश्चशम्पगा।
सङ्कर्षणो गशम्पाचैर्दामोदरः पशंगचः।।
वासुदेवो गशञ्चपैः प्रद्युम्नश्चक्रशङ्गपः।
विष्णुर्गदापशञ्चक्री माधवो गचशङ्खपैः।।
अनिरुद्धश्चगंशम्पः पुरुषोत्तमश्चपाशगैः।
अधोक्षजः पगाशञ्चो जनार्दनः पचंशगः।।
गोविन्दश्चक्रगापाशः त्रिविक्रमः पगञ्चशः।
श्रीधरः पद्मचङ्गाशं हृषिकेशो गचम्पशैः।।
नृसिंहश्चपगञ्श्च अच्युतो गपचक्रशः।
वामनः शञ्चगं पद्मैर्नारायणं शपङ्गचः।।
पद्मनाभः शम्पचाङ्ग उपेन्द्र शङ्गदाचपैः।
हरिः शञ्चपगः पूज्यः कृष्णः शङ्गपचक्रभृत्।।[13]

विष्णु की चौबीस मूर्तियों में परस्पर अन्तर और प्रत्येक के वैशिष्ट्य का सूचक-आधार भुजाओं के आयुध-क्रम (शंख-चक्र-गदा-पद्म) की भिन्नता है। शास्त्रानुसार प्रदक्षिणा-क्रम ही आयुध-क्रम होता है। अग्निपुराण में प्रदक्षिणा-क्रम का स्पष्ट कथन भी हुआ है-

ॐ रूपः केशवः पद्मशङ्खचक्रगदाधरः।
नारायणः शङ्खपद्मगदाचक्रौ प्रदक्षिणाम्।।[14]

सूत्रधार मण्डन ने भी प्रदक्षिणा का यही क्रम रखा है-

अधरं दक्षिणे हस्तमारभ्य सृष्टिमार्गतः।
चतुर्विंशतिमूर्तीनां सर्वत्रैवायुधक्रमः।।[15]

'मानसोल्लास' के 'प्रादिक्षाण्येन बोद्धव्या चतुर्विंशतिमूर्त्तयः' का भी यही आशय है। इसे ही अधिक स्पष्टता प्रदान करते हुए 'अपराजितपृच्छा'[16] और 'रूपमण्डन' में आयुध-क्रम निचले दायें हाथ (दक्षिणाधः करक्रमात्) से कथित हुआ है। हेमाद्रि को भी यही मान्य है। अर्थात् 1. दक्षिणाधः, 2. दक्षिणोर्ध्व, 3. वामोर्ध्व एवं 4. वामाधः,[17] किन्तु प्रदक्षिणा किस भुजा से आरम्भ की जाये, इस सम्बन्ध में प्रतिमालक्षणकारों में किंचित् वैमत्य है। बनर्जी महोदय (पृ. 510) ने इसी (दक्षिणाधः) को ही स्वीकार किया है। स्कन्दपुराण में भी इसे ही स्वीकार किया गया है- 'आद्यदक्षिणहस्ताञ्च विद्धि सृष्टिक्रमान्मुने',[18] किन्तु मूर्तिशास्त्री टी. ए. गोपीनाथ राव ने प्रदक्षिणा-क्रम का आरम्भ पद्मपुराण[19] के अनुसार दक्षिणोर्ध्व से माना है।[20]

12. कृष्णनारायणप्रसाद 'मागध' : श्री विष्णु और उनके अवतार : वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली-2, संस्करण 2001, पृ. 110-111
13. सूत्रधार मण्डन : देवतामूर्तिप्रकरणम् 5/8-13 14. अग्निपुराण 48/1 15. सूत्रधार मण्डन : देवतामूर्तिप्रकरणम् 5/14
16. दक्षहस्तस्याद्य आद्यं दक्षिणोर्ध्वं पुनस्तथा।। वामस्योर्ध्वमद्यश्चान्ते नाम्ना प्रदक्षिणक्रमः।। अथासां सर्वमूर्तीनां शस्त्रभेदाः करक्रमात्। नापसव्येन कुर्वीत मूर्तीर्वै विष्णुरूपिकाः।। - अपराजितपृच्छा 217/13-15
17. रामाश्रय अवस्थी : खजुराहो की देव-प्रतिमाएँ, पृ. 87 18. स्कन्दपुराण 4/61/215
19. केशवादेश्चतुर्बाहोद्दक्षिणोर्ध्व करक्रमात् - पद्मपुराण 4/78/16
20.T. A. Gopinatha Rao : Elements of Hindu Iconography : Motilal Banarsidass Publishers Private Limited, Delhi, Vol. One, Part I, Page 228.

वन-कन्हरा में मौलिश्री की सघन छाया में दो मन्दिर अवस्थित हैं। एक में भगवान् विष्णु विराजे हैं और दूसरे में चण्ड-मुण्ड का वध करनेवाली भगवती चामुण्डा। काले प्रस्तर से निर्मित भगवान् विष्णु की चतुर्भुज प्रतिमा कला की दृष्टि से अद्वितीय से है, जिसे देखते ही 'मयमतम्' की विष्णु-प्रतिमा का लक्षण मुखरित हो उठता है-

विष्णु किरीटमुकुटकेयूरकटकान्वितः।
भूषितः कटिसूत्राद्यैः पीत वासश्चतुर्भुजः।।[21]

अर्थात् विष्णु की प्रतिमा को किरीट-मुकुट, केयूर या भुजबन्ध, कटकादि अलंकरणों से युक्त किया जाना चाहिए। ये कटिसूत्रान्वित हैं। पीताम्बरधारी हैं। विष्णु को चतुर्भुज बनाया जाना चाहिए।

लगभग तीन फीट ऊँची प्रतिमा के मध्य में विष्णु का सर्वांग सुन्दर स्वरूप विद्यमान है तथा अगल-बगल दशावतार का सुन्दर स्वरूपांकन भी चतुर शिल्पकार ने अत्यन्त चपलता के साथ किया है। 'दो जलचर दो वनचर चार विप्र दो राव' की वास्तविक दर्शनानुभूति मूर्ति के समक्ष जाते ही हो जाती है। दशावतार का मनोहारी चित्रण रीतिकालीन आचार्य कवि सुखदेव मिश्र द्वारा किये गये नायिका के उन्नत उरोज के वर्णन-प्रसंग में दशावतार के आरोपित प्रतिमान को फलीभूत करता है-

मीन की बिछुरता कठोरताई कच्छपु की,
हिये घात करिबे को कोल ते उदारहैं।
बिरह बिदारबे को बली नरसिंह जू सों,
बामन सों छली बलदाऊ अनुहारहैं।
द्विज सो अजीत बलबीर बलदेवही सों,
राम सों दयाल 'सुखदेव' या विचारहैं।
मौनता में बौध कामकला में कलंकी चाल,
प्यारी के उरोज ओज दसौ अवतारहैं।।[22]

21. (क) वास्तुशास्त्रोपदेष्टा मयमुनि : मयमतम् 36/8, सम्पादकोऽनुवादकश्च डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू', भाग 2, पृ. 425 (ख) दीप्तागम के अनुबन्ध में विष्णु-प्रतिमा का लक्षण इस प्रकार दिया गया है- विष्णुं किरीटकेयूरं कटिसूत्रोपशोभितम्।। असतीपुष्पसङ्काशं शश्वद्बलस्वरूपिणम्। शङ्खचक्रगदाहस्तं अभयं च द्विलोचनम्।। पीताम्बरधरं देवं श्रीभूमिसहितं हरिम्। श्यामाभं वा विभक्ताङ्गं कुर्याद्विष्णुं विशेषतः।। - दीप्तागम, पटल 16, अनुबन्ध 2/4-6 (ग) विष्णुः पीताम्बर श्याम पीठस्थो साम्बुजासनम्। वरशङ्खचक्रसाऽभयहस्त सुभूषण।। - वास्तु. 3/100

22. ठाकुर शिवसिंह सेंगर : शिवसिंह-सरोज, पृ. 558

मयमतम् के शिल्प के आधार पर निर्मित विष्णु-प्रतिमा, वर-कन्हरा

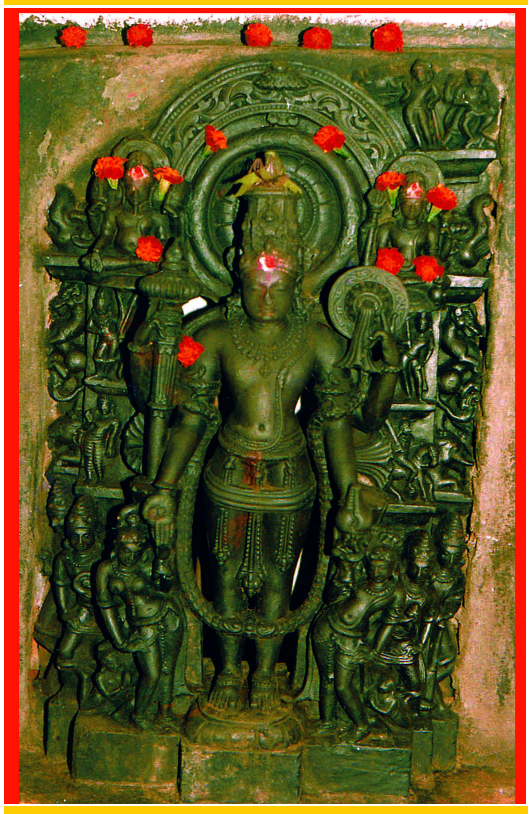

मयमतम् के शिल्प के आधार पर निर्मित विष्णु-प्रतिमा, खजुरी

वर-कन्हरा और खजुरी की विष्णु-प्रतिमाएँ खजुराहो के चन्देल शासक मदन वर्मन (1129-1163 ई.) की शासनावधि में सृजित हरिहर-प्रतिमा, जो पुरातत्त्व संग्रहालय खजुराहो के क्रमांक 558 में अवस्थित है, से काफ़ी समानता रखती हैं। अन्तर सिर्फ़ इतना है कि ये प्रतिमाएँ भगवान् विष्णु की हैं और वह प्रतिमा हरिहर, अर्थात् आधे में विष्णु और आधे में शंकर की है। शेष वही रूप दशावतार का है, किन्तु गणेश और कार्तिकेय की सहभागिता हरिहर-प्रतिमा को भिन्न कलेवर में निबद्ध करती है। जहाँ तक कला के प्रभाव का प्रश्न है, वह दोनों प्रतिमाओं पर समान रूप से विद्यमान है, न किसी की भंगिमा में किंचित् कमी है और न भाव में। हरिहर-प्रतिमा के लक्षण का स्पष्ट उल्लेख शिल्पशास्त्रों में किया गया है। श्रीभुवनदेवाचार्य ने हरिहर-प्रतिमा को लक्षण-लक्षित करते हुए लिखा है-

वरदं चाङ्कुशं दन्तं परशुं दक्षिणे करे।
कपालं शराक्षमालं पाशं दण्डं च वामके।।
पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रं च हरं रुद्रगणेश्वरम्।
वृषभवाहनोपेतं सर्वकामार्थसाधनम्।।[23]

वर-कन्हरा एवं खजुरी की विष्णु-प्रतिमाओं के शिल्प के विषय में विचार करते समय शिल्पशास्त्र की अनेक परम्पराएँ मुखरित हो उठती हैं। सर्वप्रथम प्रतिमा किस धातु की हो, इस पर विचार किया गया है। मत्स्यपुराण में कहा गया है-

सौवर्णी राजती वापि ताम्री रत्नमयी तथा।
शैली दारुमयी चापि लोहसीसमयी तथा।।
रीतिकाधातुयुक्ता वा ताम्रकांस्यमयी तथा।
शुभदारुमयी वापि देवतार्चा प्रशस्यते।।[24]

अर्थात् देव-प्रतिमा सुवर्ण, चाँदी, ताँबा, रत्न, पत्थर, देवदारु, लोहा-सीसा, पीतल, ताँबा और काँसमिश्रित अथवा शुभ काष्ठों की बनी हुई प्रशस्त मानी गयी है। इसी निर्देश के अनुसार वर-कन्हरा एवं खजुरी की विष्णु-प्रतिमाएँ शैली (पत्थर) से निर्मित हैं। भगवान् विष्णु के दोनों श्रीविग्रह का परिमाप भी मत्स्यपुराण जैसा ही है-

प्रतिमामुखमानेन नव भागान् प्रकल्पयेत्।
चतुङ्गुला भवेद् ग्रीवा भागेन हृदयं पुनः।।
नाभिस्तस्मादधः कार्या भागेनैक शोभना।
निम्नत्वे विस्तारत्वे च अङ्गुलं परिकीर्तितम्।।
नाभेरधस्तथा मेढ्रं भागेनैकेन कल्पयेत्।

23. (क) [हरिहर की संघाट मूर्ति] जिनका एक दाहिना हाथ वरदमुद्रा में, तीन दाहिने हाथों में क्रमशः चाप, अंकुश, दन्त व परशु होते हैं। बायें हाथ में कपाल, बाण, अक्षमाला, पाश एवं दण्ड हैं (इस प्रकार जो दशमुज है), जो पञ्चमुख, त्रिनेत्र हैं, वे हरिहर गणेश्वर वृषभ के वाहन पर आरूढ़ हैं और समस्त मनोरथों के साधक हैं। - श्रीभुवनदेवाचार्य : अपराजितपृच्छा 212/38-39 : सम्पादकोऽनुवादकश्च डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू' एवं प्रो. भँवर शर्मा, भाग 2, पृ. 1265-1266 (ख) सूत्रधार मण्डन कृत 'देवतामूर्तिप्रकरणम्' में हरिहर-प्रतिमा का निम्नांकित स्वरूप है- कार्यो हरिहरश्चापि दक्षिणार्धे सदाशिवः। वामार्द्धे च हृषिकेशः श्वेतनीलाकृती क्रमात्।। वरत्रिशूलचक्राब्जधारिणो वाहवः क्रमात्। दक्षिणे वृषभः पार्श्वे वामे विहङ्गराडिति।। - देवतामूर्तिप्रकरणम् 6/57-58

24. (क) मत्स्यपुराण 258/20-21, (ख) शैली दारुमयी लौही लेप्यालेख्या च सैकती। मनोमयी मणिमयी प्रतिमाष्टविधा स्मृता।। - भागवतीय क्रियायोग 11/27/12

द्विभागेनायतावूरू जानुनी चतुरङ्गुलौ।।
जङ्घे द्विभागे विख्याते पादौ च चतुरङ्गुलौ।
चतुर्दशाङ्गुलस्तद्वन्मौलिरस्य प्रकीर्त्तितः।।[25]

अर्थात् प्रतिमा के मुखमान को नौ भागों में विभक्त करे। उसमें चार अंगुल में ग्रीवा तथा एक भाग के द्वारा हृदय होना चाहिए। उसके नीचे के एक भाग में सुन्दर नाभि बनानी चाहिए। वह गहराई और विस्तार में एक अंगुल की कही गयी है। नाभि के नीचे एक भाग में लिंग, दो भागों में विस्तृत ऊरु, चार अंगुल में घुटने, दो भाग से जंघे और चार अंगुल के पैर हों। उसी प्रकार मूर्ति का सिर चौदह अंगुल का बनाना चाहिए। निश्चय ही वर-कन्हरा एवं खजुरी की विष्णु-प्रतिमाओं को बनानेवाले शिल्पकारों ने मत्स्यपुराण में वर्णित विष्णु-प्रतिमा के परिमाप का अक्षरशः पालन किया है।

दोनों प्रतिमाओं में पद्मपीठ पर खड़े चतुर्बाहु विष्णु के सुन्दर नखोंवाले चरण पैजनी से अलंकृत हैं। घुटने के नीचे तक विस्तीर्ण रुचिर वैजन्तीमाला, कटि पर तीन लड़ियोंवाला सुन्दर मेखलाभरण, उदर पर विराजमान गहरि नाभि, वक्षस्थल पर सुशोभित कण्ठाभरण, वामस्कन्ध से दक्षिण कटि तक यज्ञोपवीत, हाथ में कंगन, बाहुमूल में बाजूबन्द, कर्ण में मकराकृत कुण्डल, मस्तक पर मुकुट, मुकुट के पीछे पद्मदलाभिमण्डित मण्डलाकार तेज, उसके ऊपर छत्र की रचना करके शिल्पाचार्य ने मत्स्यपुराण के विष्णु-प्रतिमा विषयक परामर्श को चरितार्थ किया है। मत्स्यपुराणकार ने स्पष्टतः कहा गया है-

विष्णोस्तावत् प्रवक्ष्यामि याद्दग्रूपं प्रशस्यते।
शङ्खचक्रधरं शान्तं पद्महस्तं गदाधरम्।।
छत्राकारं शिरस्तस्य कम्बुग्रीवं शुभेक्षणम्।
तुङ्गनासं शुक्तिकर्णं प्रशान्तोरुभुजक्रमम्।।[26]

अर्थात् भगवान् विष्णु की जैसी प्रतिमा श्रेष्ठ मानी जाती है उसका वर्णन कर रहा हूँ। उनकी प्रतिमा का रूप शान्त हो, हाथों में शंख, चक्र, गदा तथा पद्म धारण किये हुए हो, उसका सिर छत्र के समान गोल, गला शंख के समान, आँखें सुन्दर, नासिका कुछ ऊँची, कान सीपी-सदृश, भुजाएँ विशाल और ऊरु प्रशान्त चढ़ाव-उतारवाले होने चाहिए।

वर-कन्हरा और खजुरी की विष्णु-प्रतिमाओं में नीचे भगवान् विष्णु के चरणों के समीप प्रणाम की मुद्रा में पृथ्वी और गरुड उत्कीर्ण हैं, किन्तु खजुरीवाली प्रतिमा इस दृष्टि से अधिक प्रशस्त है। दोनों ही प्रतिमाओं के दोनों ओर उत्तर एवं दक्षिण जघना, पृथुल नितम्बा, कृश कटि, पीन पयोधरा, कण्ठाभरण-स्तनसूत्रविभूषिता श्री और पुष्टि चित्रित हैं। उनके पार्श्व में नृत्यरता सुरांगनाएँ चित्रित हैं। मूर्ति के दोनों तरफ का किनारा लता-पत्र एलं कल्पलता से समन्वित व्याघ्र-सिंहों से अलंकृत है। स्तुति करते हुए देवगण के प्रतिनिधि के रूप में ऊपर दक्षिण भाग में स्वयं ब्रह्मा एवं वाम भाग में शिव विद्यमान हैं। यह स्वरूप भी मत्स्यपुराण जैसा ही है-

अधस्तात् पृथिवी तस्य कर्तव्या पादमध्यतः।
दक्षिणे प्रणतं तद्वद् गुरुत्मन्तं निवेशयेत्।।

* * * *

श्रीश्च पुष्टिश्च कर्तव्ये पार्श्वयोः पद्मसंयुते।
तोरणं चोपरिष्टान् तु विद्याधरसमन्वितम्।।

25. मत्स्यपुराण 258/26-29 26. मत्स्यपुराण 258/4-5

देवदुन्दुभिसंयुक्तं गन्धर्वमिथुनान्वितम्।

पत्रवल्लीसमोपेतं सिंहव्याघ्रसमन्वियम्।।

तथा कल्पलतोपेतं स्तुवद्भिरमरेश्वरैः।

एवंविधो भवेद्विष्णोस्त्रिभागेनास्य पीठिका।।[27]

अर्थात् भगवान् विष्णु के दोनों चरणों के मध्य में नीचे की ओर पृथ्वी की मूर्ति और दाहिनी ओर प्रणाम करते हुए गरुड की मूर्ति रखनी चाहिए। प्रतिमा के दोनों ओर हाथ में कमल लिये श्री और पुष्टि की मूर्ति भी बनानी चाहिए। प्रतिमा के ऊपर विद्याधरों से चित्रित गोलाकार तोरण का निर्माण करना चाहिए। देवताओं के नगाड़े बजाते हुए गन्धर्व-दम्पति को भी वहाँ चित्रित करना चाहिए। साथ में वहीं यह लता और पत्तों से युक्त कल्पलता से समन्वित हो और व्याघ्र-सिंहों की भी प्रतिमा से सम्पन्न। स्तुति करते हुए बड़े बड़े देवगण सामने खड़े हों। इस प्रकार विष्णु की प्रतिमा हो तथा प्रतिमा की पीठिका का विस्तार प्रतिमा-मान के तृतीयांश से निर्मित हो।

वर-कन्हरा और खजुरी की विष्णु-प्रतिमाएँ एक ही जैसी हैं, किन्तु दोनों के ऊर्ध्व तोरण में किंचित् अन्तर है। खजुरी की विष्णु-प्रतिमा में ऊर्ध्व तोरण का निर्माण मत्स्यपुराण की 'तोरणं चोपरिष्टान् तु विद्याधरसमन्वितम्' अवधारणा को चरितार्थ करता है। दोनों प्रतिमाओं में चतुर्बाहु विष्णु का आयुध-क्रम अवश्य विचारणी है। इन दोनों प्रतिमाओं में दक्षिणाधः कर में पद्म, दक्षिणोर्ध्व कर में गदा, वामोर्ध्व कर में चक्र एवं वामाधः कर में शंख है। शिल्पशास्त्रों में न केवल विष्णु के किस हाथ में किस आयुध की रचना की जाय, इसका निर्देश है, अपितु किस आयुध-क्रमवाली प्रतिमा का पूजन किस वर्ण को करना चाहिए, इसका भी स्पष्ट उल्लेख है। साथ ही किस युग में किस विष्णु की उपासना करनी चाहिए, इसका भी उल्लेख है। 'रूपमण्डनम्' में वर्णित है कि कृतादि चारों युग में क्रमशः वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध की प्रतिमाएँ श्वेत (ब्राह्मण), लाल (क्षत्रिय), पीत (वैश्य) एवं कृष्ण (शूद्र) वर्ण से पूजित हैं-

वासुदेवः सङ्कर्षणः प्रद्युम्नश्चानिरुद्धकः।

श्वेतरक्तपीतकृष्णाः क्रमात् कलियुगादिषु।।[28]

इस विधान का प्राचीनतम उल्लेख महाभारत में प्राप्त होता है। यहाँ विचारणीय यह है कि वर-कन्हरा और खजुरी की विष्णु-प्रतिमाएँ आयुध-क्रम की दृष्टि से किस विष्णु की प्रतिमा हैं? स्कन्दपुराण के 'आद्यदक्षिणहस्ताञ्च विद्धि सृष्टिक्रमान्मुने' निर्देशानुसार 'देवतामूर्तिप्रकरणम्' (5/8-13) एवं 'रूपमण्डनम्' (3/11-23) में वर्णित आयुध-क्रम की प्रदक्षिणा करने पर दोनों मूर्तियाँ विष्णु के किसी भी स्वरूप से नहीं मिलती हैं, किन्तु जब पद्मपुराण के 'केशवादेश्चतुर्बाहोद्दक्षिणोर्ध्व करक्रमात्' निर्देश को मानते हुए दक्षिणोर्ध्व, वामोर्ध्व, वामाधः, दक्षिणाधः क्रम से प्रदक्षिणा की जाय, तब आयुध-क्रम के अनुसार 'माधवो गचशङ्खपैः' अर्थात् दक्षिणोर्ध्व कर में कौमोदकी गदा, वामोर्ध्व कर में चक्र, वामाधः कर में शंख एवं दक्षिणाधः कर में पद्म धारण किये हुए माधव का स्वरूप मुखरित होता है।

भगवान् विष्णु के वर-कन्हरा और खजुरी के मन्दिर शास्त्रीय परामर्श के अनुसार निर्मित हैं। रौरवागम के क्रियापाद में ग्रामादि के मध्य में एवं आठों दिशाओं में विष्णु-प्रतिमा की स्थापना का विधान किया गया है। साथ ही यह भी कहा गया है कि सागर के पार्श्व, वनारण्य, नदी तट, जलाशय के तीर पर हरि-मन्दिर बनवाना चाहिए-

27. मत्स्यपुराण 258/11, 13-15

28. (क) रूपमण्डनम् 3/1, (ख) कृते युगे वासुदेवस्त्रेता सङ्कर्षण एव च। प्रद्युम्नो द्वापरे चैवानिरुद्धश्च कलौ युगे।। वासुदेवो भवेद्विप्रे क्षत्रे सङ्कर्षणः शुभः। प्रद्युम्नश्च तथा वैश्ये शूद्रे चैवानिरुद्धकः।। - श्रीभुवनदेवाचार्य : अपराजितपृच्छा 217/2-3

ग्रामादिषु च मध्ये च दिशाष्टास्वन्तरालके।

सागराणां तु पार्श्वे वाप्यारण्ये नदीतीरके।

तटाकतीरोक्तदिशि कर्तृत्वं हरिमन्दिरम्।।[29]

विष्णुपुराण में पर्वत की कन्दराओं में विष्णु-मन्दिर बनवाने का उल्लेख किया गया है। मन्दिर मेरु पर्वतों के चारों ओर अवस्थित शीतान्त आदि केसर पर्वतों के मध्य बनते थे, जहाँ सिद्ध-चारण आदि विहार करते थे और वहाँ सुन्दर कन्दराएँ थीं-

मैरोश्चतुर्दिशं ये प्रोक्ताः केसरपर्व्वताः।

शीतान्ताद्या मुने! तेषामतीव हि मनोरमाः।।

शैलानामन्तरे द्रोण्यः सिद्धचारणसेविताः।

सुरम्याणि तथा तासु काननानि पुराणि च।।[30]

वस्तुतः वर-कन्हरा की व्युत्पत्ति वर-कन्दरा से ही हुई है। इसलिए विष्णु-मन्दिर और वर-कन्हरा की युति विष्णुपुराण की परिकल्पना को चरितार्थ करती है।

भगवान् विष्णु की जैसी प्रतिमाएँ वर-कन्हरा एवं खजुरी में हैं, वसी ही एक विलक्षण विष्णु-प्रतिमा महानद शोण के उद्गम स्थल अमरकण्टक के कर्ण-मन्दिर में अवस्थित है। अमरकण्टकस्थ विष्णु-प्रतिमा कलचुरिकाल की बनी हुई है, जबकि वर-कन्हरा और खजुरी की विष्णु-प्रतिमाएँ चन्देलकाल की देन हैं।

यहाँ यह बड़े दुःख के साथ लिखना पड़ रहा है कि 31 दिसम्बर, 2011 ई. (शनिवार) की रात्रि में वर-कन्हरा की लोकाभिराम विष्णु-प्रतिमा मूर्ति-चोरों के द्वारा अत्यन्त निर्ममतापूर्वक क्षतिग्रस्त कर दी गयी। भगवान् विष्णु के उदर से लेकर मुकुट तक का भाग मूर्ति-चोर अपने साथ उठा ले गये। भगवान् विष्णु की यह प्रतिमा सोनभद्र जनपद बनने के पूर्व भी 1 जुलाई, 1986 ई. (मंगलवार) की रात्रि में चोरी हो गयी थी, किन्तु तत्कालीन पुलिस अधीक्षक श्री चन्द्रमोहन भट्ट की कार्य-कुशलता एवं थानाध्यक्ष श्री योगेन्द्रनाथ रावत की सूझ-बूझ के कारण प्रतिमा सप्ताहान्त के भीतर ही बरामद कर ली गयी थी। सुरक्षा की दृष्टि से विष्णु-प्रतिमा को घोरावल थाने के मालखाने में रख दिया गया था। उस समय विष्णु-प्रतिमा की क़ीमत अस्सी लाख रुपये निर्धारित की गयी थी। श्रीकृष्णजन्माष्टमी के अवसर पर थाना-परिसर में सजायी जानेवाली झाँकी में क्षेत्रीय जनता को भगवान् विष्णु की इस मनोहारिणी प्रतिमा के दर्शन होते थे। क्षेत्र की जनता ने अपने प्रभु को उनके धाम वर-कन्हरा में पुनः प्रतिष्ठापित करने के लिए बाबू शारदाप्रसाद सिंह के नेतृत्व में न्यायालय में मुक़दमा दायर किया। चैत्र-नवरात्रि के अवसर पर नवमी के दिन भगवान् विष्णु की प्रतिमा पुलिस-सुरक्षा में एक दिन के लिए वर-कन्हरा-मन्दिर में आती थी, जिसके लिए बाबू शारदाप्रसाद सिंह ने अपना डोरिहार गाँव जमानत में रखा था। यह क्रम तब तक चला, जब तक न्यायालय से भगवान् विष्णु को स्थायी रूप से वर-कन्हरा में प्रतिष्ठापित करने का आदेश पारित नहीं हो गया।

वर-कन्हरा की विष्णु-प्रतिमा का न केवल धार्मिक एवं पौराणिक महत्त्व था, अपितु इसकी पुरातात्त्विक महत्ता भी निर्विवाद थी। शोणोद्गमस्थल अमरकण्टक में कलचुरिकालीन मन्दिर में अवस्थित भगवान् विष्णु की प्रतिमा से शत प्रतिशत साम्य स्थापित करनेवाली वर-कन्हरा की विष्णु-प्रतिमा चन्देलकालीन मूर्तिकला का अद्वितीय उदाहरण थी। अब यह प्रतिमा महाँव की भगवान् भैरव की प्रतिमा की तरह ही यहाँ के निवासियों के लिए इतिहास का एक विस्मृत अध्याय हो गयी है। वर-कन्हरा की विष्णु-प्रतिमा के क्षतिग्रस्त हो जाने के पश्चात् अपने सर्वांग सुन्दर स्वरूप में अब केवल खजुरी की विष्णु-प्रतिमा ही शेष है।

***